विकास

# और अब नदियों को जोड़ने की बातें

आशुतोष उपाध्याय

कर्नाटक और तमिलनाडु के बीच कावेरी नदी के पानी के बंटवारे पर चल रहे विवाद की पृष्ठभूमि में उच्चतम न्यायालय ने केन्द्र सरकार को देश की नदियों को जोड़ने की महत्वाकांक्षी परियोजना को 10 वर्ष के भीतर पूरा कर लेने हेतु एक टास्कफोर्स गठित करने के निर्देश दिए हैं। प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने भी इस आशय का बयान जारी किया है। 25 दिसम्बर को अपने जन्मदिन के अवसर पर दिए गए भाषण में प्रधानमंत्री ने कहा कि हमें अपनी नदियों की एक बूंद भी समुद्र में बरबाद नहीं होने देनी है। इससे पहले सरकार ने इस परियोजना को सन् 2043 तक पूरा कर लेने के लिए अदालत में हलफनामा प्रस्तुत किया था। इस महापरियोजना के बारे में यह प्रचारित किया जा रहा है कि इससे देश के जल संकट की तस्वीर बदल जाएगी। उत्तर भारत की नदियों का अतिरिक्त जल दक्षिण की नदियों की ओर मोड़ दिया जाएगा। कावेरी विवाद के पसमंजर में सरसरी तौर पर नदियों को जोड़ने का प्रस्ताव आकर्षक प्रतीत होता है। लेकिन जहां एक नदी बेसिन के भीतर बड़े बांधों के निर्माण के अनुभव बहुत अच्छे नहीं रहे हैं, नदियों को जोड़ने की परियोजना महा-विवादों के जन्म का कारण बन सकती है।

दरअसल नदियों को जोड़ने का विचार नया नहीं है। नेहरू मंत्रिमंडल के सिंचाई मंत्री रहे के.एल. राव ने सबसे पहले इस तरह का प्रस्ताव दिया था। वे पेशे से इंजीनियर थे और उन्हें भारत के कई बड़े बांधों के डिजाइन को श्रेय है। इस प्रस्ताव में 2640 किमी. लम्बी नहर के जरिए गंगा से कावेरी को जोड़ने की बात कही गयी थी। इसके अनुसार नहर को पटना के पास से निकाला जाना प्रस्तावित था, जिसमें वर्ष में 150 दिन बाढ़ के 1,680 क्यूबिक मीटर पानी को कावेरी तक पहुंचाने के लिए बीच में 550 मी. की ऊंचाई तक पम्पों के जरिए उठाने की व्यवस्था थी। इसके अलावा इस प्रस्ताव में ब्रह्मपुत्र के पानी को गंगा में मिलाने की बात भी कही गयी थी। इसके लिए भी नहर को बीच में 15 मी. की ऊंचाई तक पम्प करना पड़ता। लेकिन भारी लागत और बहुत ज्यादा बिजली के खर्च को देखते हुए इस प्रस्ताव को अव्यावहारिक मान कर खारिज कर दिया गया।

एक बार फिर नये सिरे से नदियों को जोड़ने का प्रस्ताव लाया जा रहा है, जो पुराने प्रस्ताव ज्यादा जटिल और लम्बा-चौड़ा है। नये प्रस्ताव के अनुसार गंगा और ब्रह्मपुत्र की हिमालय से निकलनी वाली सहायक नदियों में भारत, नेपाल व भूटान में बड़े बांध बनाए जायेंगे। पूर्व की ओर बहने वाली नदियों के अतिरिक्त पानी को पश्चिम की ओर तथा गंगा व ब्रह्मपुत्र के पानी को महानदी की ओर भेजने की बात कही गयी है। इसी प्रकार महानदी, गोदावरी, कृष्णा व कावेरी को जोड़ने और इनमें जल-संग्रह बांधों के निर्माण की तथा केन, चंबल व तापी जैसी नदियों को पश्चिम की ओर मोड़ने की योजना बनाई गयी है। इस प्रकार 5,60,000 करोड़ रुपयों के खर्च से 30 जोड़ बनाने का विचार रखा गया है, इसमें 14 हिमालयी क्षेत्र की नदियों में होंगे तथा 16 दक्षिण की नदियों में।

परियोजना के बारे में बड़े आशावादी शब्दों में कहा गया है कि इससे उत्तरी की नदियों में आने वाली बाढ़ का अतिरिक्त पानी समुद्र में बरबाद नहीं हो पाएगा। बल्कि उससे दक्षिण की अपेक्षाकृत सूखी धरती की प्यास बुझाई जा सकेगी। लेकिन यह भूलना नहीं चाहिए कि ऐसी समझ नदी को महज पानी ढोने का माध्यम समझने से ही पैदा हो सकती है।

नदी एक जीवित पारिस्थितिकी तंत्र होती है। यहां तक कि बाढ़ भी इस पारिस्थितिकी का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। बाढ़ से प्रतिवर्ष होने वाला नुकसान नदी के पारिस्थितिकी तंत्र की उपेक्षा का परिणाम है। क्या यह तथ्य नहीं कि गंगा-यमुना का उपजाऊ मैदान इन नदियों की बाढ़ का ही नतीजा है और नदियों के किनारे बसने वाले पारम्परिक समाजों के करोड़ों वाशिंदे इनकी पारिस्थितिकी से तामेल बिठा कर अपनी आजीविका चलाते हैं। इसलिए नदियों की धारा बदलने का विचार सबसे पहले प्रकृति विरोधी विचार है। दूसरे, 'अतिरिक्त जल' की अवधारणा भी वास्तविक नहीं है। खास तौर पर आज के बदलते वैश्विक वातावरण ने अतिरिक्त जल की उपलब्धता को इतना अनिश्चित बना दिया है कि इस पर किसी महा-परियोजना को खड़ा करना बुद्धिमानी नहीं होगी। नदी के स्वाभाविक पारिस्थितिकी तंत्र से छेड़छाड़ की कीमत इसमें पलने वाले पेड़-पौधों व जीव-जन्तुओं को भी चुकानी पड़ेगी।

नदियों को जोड़ने की बात मौजूदा राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में अत्यन्त विवादों में उलझने के लिए अभिशप्त है। कावेरी विवाद इस लिहाज से एक ज्वलंत उदाहरण है। फिर जब गंगा जैसी अनेक राज्यों और अंततः बांग्लादेश में बहने वाली नदी के पानी की धारा मोड़ना कठिन अंतर्राज्यीय व अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों का कारण बनेगा। फरक्का बांध का जलस्तर पहले ही भारत-बांग्लादेश के बीच एक अनसुलझा

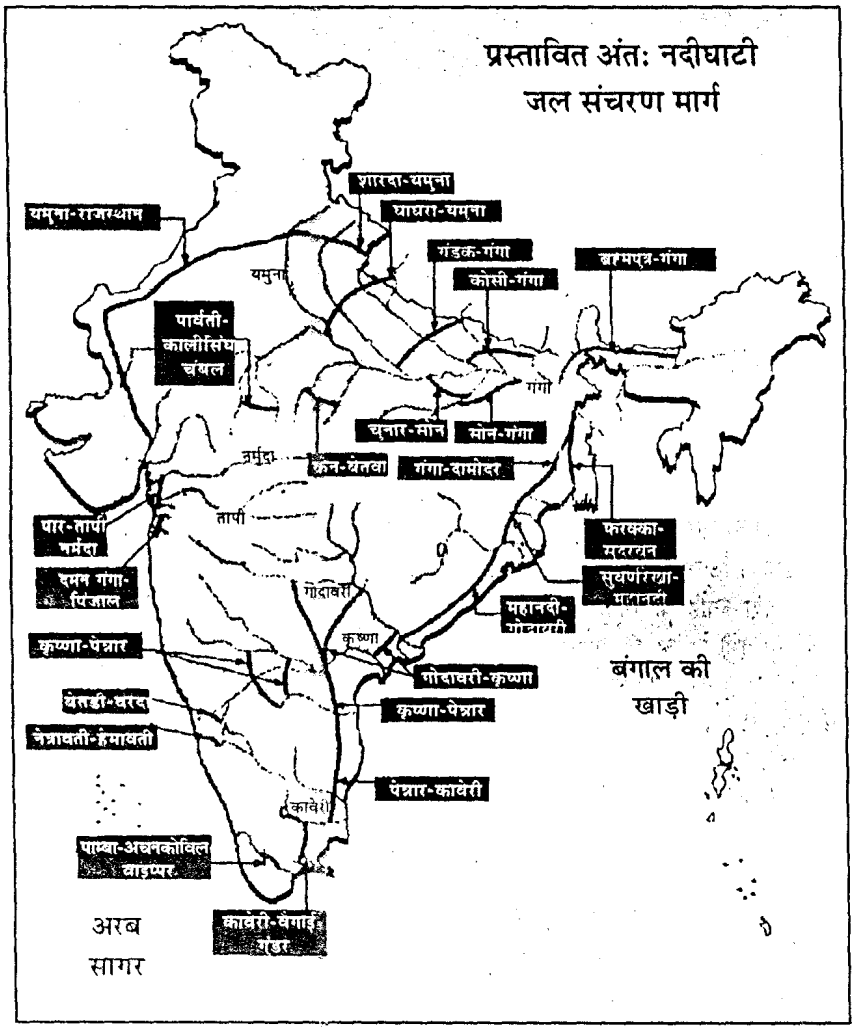


मसला है। इसके अलावा नहरों और जल संग्रह हेतु बनाए गए विशाल बांधों से विस्थापित जनसंख्या अब तक बड़े बांधों से विस्थापित आबादी की तुलना में कहीं ज्यादा होगी। यह भी कहा जा रहा है कि नहरें अनेक राष्ट्रीय पार्कों व अभयारण्यों से होकर गुजरेंगी और इसके लिए पर्यावरण मंत्रालय से अनुमति का प्रश्न भी जुड़ा है।

बड़े बांधों और नदियों को जोड़ने जैसी महा-परियोजनाओं को देश के कृषि विकास का एकमात्र समाधान समझने की बुद्धि के पीछे दरअसल वह मानसिकता है जो संसाधनों के असीमित होने के वहम में जीती है। यदि हम टिकाऊ विकास चाहते हैं तो हमें अपने संसाधनों के अनुरूप अपनी जीवन शैली और प्रबंधन के तौर-तरीके विकसित करने होंगे।

भारत में पिछले कुछ वर्षों के दौरान खेती के लिहाज से आगे कहे जाने वाले राज्य भारी संकट से घिरे हैं। अत्यधिक ऊर्जा तथा पानी पर आधारित कृषि प्रारम्भिक दौर में जबर्दस्त उत्पादन देने के बावजूद बहुत दूर तक नहीं जा सकी। आज उन्हीं राज्यों में किसान जमीन के खराब हो जाने, पानी की कमी या अनेक दूसरे कारणों से आत्महत्या करने को विवश हैं। यह भी कहा जाना जाने लगा है कि हरित क्रांति के परिणाम अंततः भारतीय कृषि व्यवस्था के खिलाफ ही गए हैं। ऐसे में बगैर गंभीर बहस-मुबाहिसे और अध्ययन के ऐसी परियोजनाओं के बारे में निर्णय ले लेना अंततः और बड़े संकटों की ओर धकेलेगा।

भारत की किसी भी नदी घाटी में वर्षा, भू व सतही जल सहित सम्पूर्ण जल की उपलब्धता सम्बंधी अध्ययन नहीं हुए हैं। न ही देश के खेती में किए जाने वाले बदलाव यहां के पारिस्थितिक अध्ययनों के आधार पर किए जाते हैं। अब तो हालत यह है कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हितों के अनुरूप खेती को निर्देशित किया जा रहा है। इसी के अनुरूप सिंचाई की आवश्यकताएं भी तय हो रही हैं।

ऐसी स्थिति में अतिउत्साहित प्रधानमंत्री अटलबिहारी बाजपेयी का यह कहना कि कांग्रेस सरकार नदियों को जोड़ने की बातें करती थी, हम नदियों को जोड़ेंगे, बड़बोलेपन से ज्यादा कुछ नहीं है। बड़े बांधों के पिछले अनुभवों की कड़वाहट अभी बनी हुई है, नदियों को जोड़ने की महापरियोजना देश के सामाजिक व पारिस्थितिक जीवन में जहर न भर दे।

शुभ कामनाओं सहित
**Kumaun Agricultural & Greenary Advancement Society**
**(KAGAS)**
कृषि-बागवानी के जरिए स्वावलम्बन हेतु संलग्न
प्रिया सदन, निकट आनंद होटल, पिथौरागढ़
फोनः 225265, फैक्सः 225488